रामचरित्मानस

उत्तरकाण्ड

पुत्रोत्पति, अयोध्याजी की रमणीयता, सनकादिका आगमन और संवाद

दोहा :

*** ग्यान गिरा गोतीत अज माया मन गुन पार। सोइ सच्चिदानंद घन कर नर चरित उदार॥25॥

भावार्थ:-

जो (बौद्धिक) ज्ञान, वाणी और इंद्रियों से परे और अजन्मा है तथा माया, मन और गुणों के परे है, वही सच्चिदानन्दघन भगवान् श्रेष्ठ नरलीला करते हैं॥25॥

चौपाई :

*** प्रातकाल सरऊ करि मज्जन। बैठहिं सभाँ संग द्विज सज्जन॥ बेद पुरान बसिष्ट बखानहिं। सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं॥1॥

भावार्थ:-

प्रातःकाल सरयूजी में स्नान करके ब्राह्मणों और सज्जनों के साथ सभा में बैठते हैं। वशिष्ठजी वेद और पुराणों की कथाएँ वर्णन करते हैं और श्री रामजी सुनते हैं, यद्यपि वे सब जानते हैं॥1॥

*** अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननीं सुख भरहीं॥ भरत सत्रुहन दोनउ भाई। सहित पवनसुत उपबन जाई॥2॥

भावार्थ:-

वे भाइयों को साथ लेकर भोजन करते हैं। उन्हें देखकर सभी माताएँ आनंद से भर जाती हैं। भरतजी और शत्रुघ्नजी दोनों भाई हनुमान्‌जी सहित उपवनों में जाकर,॥2॥

*** बूझहिं बैठि राम गुन गाहा। कह हनुमान सुमति अवगाहा॥ सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं। बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं॥3॥

भावार्थ:-

वहाँ बैठकर श्री रामजी के गुणों की कथाएँ पूछते हैं और हनुमान्‌जी अपनी सुंदर बुद्धि से उन गुणों में गोता लगाकर उनका वर्णन करते हैं। श्री रामचंद्रजी के निर्मल गुणों को सुनकर दोनों भाई अत्यंत सुख पाते हैं और विनय करके बार-बार कहलवाते हैं॥3॥

*** सब कें गृह गृह होहिं पुराना। राम चरित पावन बिधि नाना॥ नर अरु नारि राम गुन गानहिं।

करहिं दिवस निसि जात न जानहिं॥4॥

भावार्थ:-

सबके यहाँ घर-घर में पुराणों और अनेक प्रकार के पवित्र रामचरित्रों की कथा होती है। पुरुष और स्त्री सभी श्री रामचंद्रजी का गुणगान करते हैं और इस आनंद में दिन-रात का बीतना भी नहीं जान पाते॥4॥

दोहा :

*** अवधपुरी बासिन्ह कर सुख संपदा समाज। सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज॥26॥

भावार्थ:-

जहाँ भगवान् श्री रामचंद्रजी स्वयं राजा होकर विराजमान हैं, उस अवधपुरी के निवासियों के सुख-संपत्ति के समुदाय का वर्णन हजारों शेषजी भी नहीं कर सकते॥26॥

चौपाई :

***नारदादि सनकादि मुनीसा। दरसन लागि कोसलाधीसा॥ दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं। देखि नगरु बिरागु बिसरावहिं॥1॥

भावार्थ:-

नारद आदि और सनक आदि मुनीश्वर सब कोसलराज श्री रामजी के दर्शन के लिए प्रतिदिन अयोध्या आते हैं और उस (दिव्य) नगर को देखकर वैराग्य भुला देते हैं॥1॥

*** जातरूप मनि रचित अटारीं। नाना रंग रुचिर गच ढारीं॥ पुर चहुँ पास कोट अति सुंदर। रचे कँगूरा रंग रंग बर॥2॥

भावार्थ:-

(दिव्य) स्वर्ण और रत्नों से बनी हुई अटारियाँ हैं। उनमें (मणि-रत्नों की) अनेक रंगों की सुंदर ढली हुई फर्शें हैं। नगर के चारों ओर अत्यंत सुंदर परकोटा बना है, जिस पर सुंदर रंग-बिरंगे कँगूरे बने हैं॥2॥

*** नव ग्रह निकर अनीक बनाई। जनु घेरी अमरावति आई॥ लमहि बहु रंग रचित गच काँचा। जो बिलोकि मुनिबर मन नाचा॥3॥

भावार्थ:-

मानो नवग्रहों ने बड़ी भारी सेना बनाकर अमरावती को आकर घेर लिया हो। पृथ्वी (सड़कों) पर अनेकों रंगों के (दिव्य) काँचों (रत्नों) की गच बनाई (ढाली) गई है, जिसे देखकर श्रेष्ठ मुनियों के भी मन नाच उठते हैं॥3॥

*** धवल धाम ऊपर नभ चुंबत। कलस मनहुँ रबि ससि दुति निंदत॥ बहु मनि रचित झरोखा भ्राजहिं। गृह गृह प्रति मनि दीप बिराजहिं॥4॥

भावार्थ:-

उज्ज्वल महल ऊपर आकाश को चूम (छू) रहे हैं। महलों पर के कलश (अपने दिव्य प्रकाश से) मानो सूर्य, चंद्रमा के प्रकाश की भी निंदा (तिरस्कार) करते हैं। (महलों में) बहुत सी मणियों से रचे हुए झरोखे सुशोभित हैं और घस्घर में मणियों के दीपक शोभा पा रहे हैं॥4॥

छंद :

*** मनि दीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरीं बिद्रुम रची। मनि खंभ भीति बिरंचि बिरची कनक मनि मरकत खची॥ सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे। प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन्हि खचे॥

भावार्थ:-

घरों में मणियों के दीपक शोभा दे रहे हैं। मूँगों की बनी हुई देहलियाँ चमक रही हैं। मणियों (रत्नों) के खम्भे हैं। मरकतमणियों (पन्नों) से जड़ी हुई सोने की दीवारें ऐसी सुंदर हैं मानो ब्रह्मा ने खास तौर से बनाई हों। महल सुंदर, मनोहर और विशाल हैं। उनमें सुंदर स्फटिक के आँगन बने हैं। प्रत्येक द्वार पर बहुत से खरादे हुए हीरों से जड़ेहुए सोने के किंवाड़ हैं॥

दोहा :

*** चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बनाइ। राम चरित जे निरख मुनि ते मन लेहिं चोराइ॥27॥

भावार्थ:-

घर-घर में सुंदर चित्रशालाएँ हैं, जिनमें श्री रामचंद्रजी के चरित्र बड़ी सुंदरता के साथ सँवारकर अंकित किए हुए हैं। जिन्हें मुनि देखते हैं, तो वे उनके भी चित्त को चुरा लेते हैं॥27॥

चौपाई :

*** सुमन बाटिका सबहिं लगाईं। बिबिध भाँति करि जतन बनाईं॥ लता ललित बहु जाति सुहाईं। फूलहिं सदा बसंत कि नाईं॥1॥

भावार्थ:-

सभी लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की पुष्पों की वाटिकाएँ यत्न करके लगा रखी हैं, जिनमें बहुत जातियों की सुंदर और ललित लताएँ सदा वसंत की तरह फूलती रहती हैं॥1॥

***गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिबिधि सदा बह सुंदर। नाना खग बालकन्हि जिआए। बोलत मधुर उड़ात सुहाए॥2॥

भावार्थ:-

भौंरे मनोहर स्वर से गुंजार करते हैं। सदा तीनों प्रकार की सुंदर वायु बहती रहती है। बालकों ने बहुत से पक्षी पाल रखे हैं जो मधुर बोली बोलते हैं और उड़ने में सुंदर लगते हैं॥2॥

*** मोर हंस सारस पारावत। भवननि पर सोभा अति पावत॥ जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं॥3॥

भावार्थ:-

मोर, हंस, सारस और कबूतर घरों के ऊपर बड़ी ही शोभा पाते हैं। वे पक्षी (मणियों की दीवारों में और छत में) जहाँ-तहाँ अपनी परछाईं देखकर (वहाँ दूसरे पक्षी समझकर) बहुत प्रकार से मधुर बोली बोलते और नृत्य करते हैं॥3॥

***सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जनपालक॥ राज दुआर सकल बिधि चारू। बीथीं चौहट रुचिर बजारू॥4॥

भावार्थ:-

बालक तोता-मैना को पढ़ाते हैं कि कहो- 'राम' 'रघुपति' 'जनपालक'। राजद्वार सब प्रकार से सुंदर है। गलियाँ, चौराहे और बाजार सभी सुंदर हैं॥4॥

छंद :

*** बाजार रुचिर न बनइ बरनत बस्तु बिनु गथ पाइए। जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गाइए॥ बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते। सब सुखी सब सच्चरि सुंदर नारि नर सिसु जरठ जे॥

भावार्थ:-

सुंदर बाजार है, जो वर्णन करते नहीं बनता, वहाँ वस्तुएँ बिना ही मूल्य मिलती हैं। जहाँ स्वयं लक्ष्मीपति राजा हों, वहाँ की संपत्ति का वर्णन कैसे किया जाए? बजाज (कपड़े का व्यापार करने वाले), सराफ (रुपए-पैसे का लेन-देन करने वाले) आदि वणिक् (व्यापारी) बैठे हुए ऐसे जान पड़ते हैं मानो अनेक कुबेर हों, स्त्री, पुरुष बच्चे और बूढ़े जो भी हैं, सभी सुखी, सदाचारी और सुंदर हैं॥

दोहा :

*** उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गंभीर। बाँधे घाट मनोहर स्वल्प पंक नहिं तीर॥28॥

भावार्थ:-

नगर के उत्तर दिशा में सरयूजी बह रही हैं, जिनका जल निर्मल और गहरा है। मनोहर घाट बँधे हुए हैं, किनारे पर जरा भी कीचड़ नहीं है॥28॥

चौपाई :

*** दूरि फराक रुचिर सो घाटा। जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाटा॥ पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना॥1॥

भावार्थ:-

अलग कुछ दूरी पर वह सुंदर घाट है, जहाँ घोड़ों और हाथियों के ठट्ट के ठट्ट जल पिया करते हैं। पानी भरने के लिए बहुत से (जनाने) घाट हैं, जो बड़े ही मनोहर हैं। वहाँ पुरुष स्नान नहीं करते॥1॥

*** राजघाट सब बिधि सुंदर बर। मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर॥ तीर तीर देवन्ह के मंदिर। चहुँ दिसि तिन्ह के उपबन सुंदर॥2॥

भावार्थ:-

राजघाट सब प्रकार से सुंदर और श्रेष्ठ है, जहाँ चारों वर्णों के पुरुष स्नान करते हैं। सरयूजी के किनारे-किनारे देवताओं के मंदिर हैं, जिनके चारों ओर सुंदर उपवन (बगीचे) हैं॥2॥

*** कहुँ कहुँ सरिता तीर उदासी। बसहिं ग्यान रत मुनि संन्यासी॥ तीर तीर तुलसिका सुहाई। बृंद बृंद बहु मुनिन्ह लगाई॥3॥

भावार्थ:-

नदी के किनारे कहीं-कहीं विरक्त और ज्ञानपरायण मुनि और संन्यासी निवास करते हैं। सरयूजी के किनारे-किनारे सुंदर तुलसीजी के झुंड के झुंड बहुत से पेड़ मुनियों ने लगा रखे हैं॥3॥

*** पुर सोभा कछु बरनि न जाई। बाहेर नगर परम रुचिराई॥ देखत पुरी अखिल अघ भागा। बन उपबन बापिका तड़ागा॥4॥

भावार्थ:-

नगर की शोभा तो कुछ कही नहीं जाती। नगर के बाहर भी परम सुंदरता है। श्री अयोध्यापुरी के दर्शन करते ही संपूर्ण पाप भाग जाते हैं। (वहाँ) वन, उपवन, बावलिया और तालाब सुशोभित हैं॥4॥

छंद :

*** बापीं तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं। सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं॥ बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं। आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारहीं॥

भावार्थ:-

अनुपम बावलियाँ, तालाब और मनोहर तथा विशाल कुएँ शोभा दे रहे हैं, जिनकी सुंदर (रत्नों की) सीढ़ियाँ और निर्मल जल देखकर देवता और मुनि तक मोहित हो जाते हैं। (तालाबों में) अनेक रंगों के कमल खिल रहे हैं, अनेकों पक्षी कूज रहे हैं और भौंरे गुंजार कर रहे हैं। (परम) रमणीय बगीचे कोयल आदि पक्षियों की (सुंदर बोली से) मानो राह चलने वालों को बुला रहे हैं।

दोहा :

*** रमानाथ जहँ राजा सो पुर बरनि कि जाइ। अनिमादिक सुख संपदा रहीं अवध सब छाइ॥29॥

भावार्थ:-

स्वयं लक्ष्मीपति भगवान् जहाँ राजा हों, उस नगर का कहीं वर्णन किया जा सकता है? अणिमा आदि आठों सिद्धियाँ और समस्त सुख-संपत्तियाँ अयोध्या में छा रही हैं॥29॥

चौपाई :

*** जहँ तहँ नर रघुपति गुन गावहिं। बैठि परसपर इहइ सिखावहिं॥ भजहु प्रनत प्रतिपालक रामहि। सोभा सील रूप गुन धामहि॥1॥

भावार्थ:-

लोग जहाँ-तहाँ श्री रघुनाथजी के गुण गाते हैं और बैठकर एक-दूसरे को यही सीख देते हैं कि

शरणागत का पालन करने वाले श्री रामजी को भजो, शोभा, शील, रूप और गुणों के धाम श्री रघुनाथजी को भजो॥1॥

*** जलज बिलोचन स्यामल गातहि। पलक नयन इव सेवक त्रातहि॥ धृत सर रुचिर चाप तूनीरहि। संत कंज बन रबि रनधीरहि॥2॥

भावार्थ:-

कमलनयन और साँवले शरीर वाले को भजो। पलक जिस प्रकार नेत्रों की रक्षा करती हैं उसी प्रकार अपने सेवकों की रक्षा करने वाले को भजो। सुंदर बाण, धनुष और तरकस धारण करने वाले को भजो। संत रूपी कमलवन के (खिलाने के) सूर्य रूप रणधीर श्री रामजी को भजो॥2॥

*** काल कराल ब्याल खगराजहि। नमत राम अकाम ममता जहि॥ लोभ मोह मृगजूथ किरातहि। मनसिज करि हरि जन सुखदातहि॥3॥

भावार्थ:-

कालरूपी भयानक सर्प के भक्षण करने वाले श्री राम रूप गरुड़जी को भजो। निष्कामभाव से प्रणाम करते ही ममता का नाश कर देने वाले श्री रामजी को भजो। लोभ-मोह रूपी हरिनों के समूह के नाश करने वाले श्री राम किरात को भजो। कामदेव रूपी हाथी के लिए सिंह रूप तथा सेवकों को सुख देने वाले श्री राम को भजो॥3॥

*** संसय सोक निबिड़ तम भानुहि। दनुज गहन घन दहन कृसानुहि॥ जनकसुता समेत रघुबीरहि। कस न भजहु भंजन भव भीरहि॥4॥

भावार्थ:-

संशय और शोक रूपी घने अंधकार का नाश करने वाले श्री राम रूप सूर्य को भजो। राक्षस रूपी घने वन को जलाने वाले श्री राम रूप अग्नि को भजो। जन्म-मृत्यु के भय को नाश करने वाले श्री जानकी समेत श्री रघुवीर को क्यों नहीं भजते?॥4॥

***बहु बासना मसक हिम रासिहि। सदा एकरस अज अबिनासिहि॥ मुनि रंजन भंजन महि भारहि। तुलसिदास के प्रभुहि उदारहि॥5॥

भावार्थ:-

बहुत सी वासनाओं रूपी मच्छरों को नाश करने वाले श्री राम रूप हिमराशि (बर्फ के ढेर) को भजो। नित्य एकरस, अजन्मा और अविनाशी श्री रघुनाथजी को भजो। मुनियों को आनंद देने वाले, पृथ्वी का भार उतारने वाले और तुलसीदास के उदार (दयालु) स्वामी श्री रामजी को भजो॥5॥

दोहा :

*** एहि बिधि नगर नारि नर करहिं राम गुन गान। सानुकूल सब पर रहहिं संतत कृपानिधान॥30॥

भावार्थ:-

इस प्रकार नगर के स्त्री-पुरुष श्री रामजी का गुण-गान करते हैं और कृपानिधान श्री रामजी सदा सब पर अत्यंत प्रसन्न रहते हैं॥30॥

चौपाई :

*** जब ते राम प्रताप खगेसा। उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा॥ पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका। बहु तेन्ह सुख बहु तन मन सोका॥1॥

भावार्थ:-

(काकभुशुण्डिजी कहते हैं-) हे पक्षीराज गरुड़जी! जब से रामप्रताप रूपी अत्यंत प्रचण्ड सूर्य उदित हुआ, तब से तीनों लोकों में पूर्ण प्रकाश भर गया है। इससे बहुतों को सुख और बहुतों के मन में शोक हुआ॥1॥

*** जिन्हहि सोक ते कहउँ बखानी। प्रथम अबिद्या निसा नसानी॥ अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम क्रोध कैरव सकुचाने॥2॥ `

भावार्थ:-

जिन-जिन को शोक हुआ, उन्हें मैं बखानकर कहता हूँ (सर्वत्र प्रकाश छा जाने से) पहले तो अविद्या रूपी रात्रि नष्ट हो गई। पाप रूपी उल्लू जहाँ-तहाँ छिप गए और काम-क्रोध रूपी कुमुद मुँद गए॥2॥

*** बिबिध कर्म गुन काल सुभाउ। ए चकोर सुख लहहिं न काऊ॥ मत्सर मान मोह मद चोरा। इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा॥3॥

भावार्थ:-

भाँति-भाँति के (बंधनकारक) कर्म, गुण, काल और स्वभाव- ये चकोर हैं, जो (रामप्रताप रूपी सूर्य के प्रकाश में) कभी सुख नहीं पाते। मत्सर (डाह), मान, मोह और मद रूपी जो चोर हैं, उनका हुनर (कला) भी किसी ओर नहीं चल पाता॥3॥

*** धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना। ए पंकज बिकसे बिधि नाना॥ सुख संतोष बिराग बिबेका। बिगत सोक ए कोक अनेका॥4॥

भावार्थ:-

धर्म रूपी तालाब में ज्ञान, विज्ञान- ये अनेकों प्रकार के कमल खिल उठे। सुख, संतोष, वैराग्य और विवेक- ये अनेकों चकवे शोकरहित हो गए॥4॥

दोहा :

*** यह प्रताप रबि जाकें उर जब करइ प्रकास। पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास॥31॥

भावार्थ:-

यह श्री रामप्रताप रूपी सूर्य जिसके हृदय में जब प्रकाश करता है, तब जिनका वर्णन पीछे से किया गया है, वे (धर्म, ज्ञान, विज्ञान, सुख, संतोष, वैराग्य और विवेक) बढ़ जाते हैं और जिनका वर्णन पहले किया गया है, वे (अविद्या, पाप, काम, क्रोध, कर्म, काल, गुण, स्वभाव आदि) नाश को

प्राप्त होते (नष्ट हो जाते) हैं॥31॥

चौपाई :

*** भ्रातन्ह सहित रामु एक बारा। संग परम प्रिय पवनकुमारा॥ सुंदर उपबन देखन गए। सब तरु कुसुमित पल्लव नए॥1॥

भावार्थ:-

एक बार भाइयों सहित श्री रामचंद्रजी परम प्रिय हनुमान्‌जी को साथ लेकर सुंदर उपवन देखने गए। वहाँ के सब वृक्ष फूले हुए और नए पत्तों से युक्त थे॥1॥

*** जानि समय सनकादिक आए। तेज पुंज गुन सील सुहाए॥ ब्रह्मानंद सदा लयलीना। देखत बालक बहुकालीना॥2॥

भावार्थ:-

सुअवसर जानकर सनकादि मुनि आए, जो तेज के पुंज, सुंदर गुण और शील से युक्त तथा सदा ब्रह्मानंद में लवलीन रहते हैं। देखने में तो वे बालक लगते हैं, परंतु हैं बहुत समय के॥2॥

***रूप धरें जनु चारिउ बेदा। समदरसी मुनि बिगत बिभेदा॥ आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं। रघुपति चरित होइ तहँ सुनहीं॥3॥

भावार्थ:-

मानो चारों वेद ही बालक रूप धारण किए हों। वे मुनि समदर्शी और भेदरहित हैं। दिशाएँ ही उनके वस्त्र हैं। उनके एक ही व्यसन है कि जहाँ श्री रघुनाथजी की चरित्र कथा होती है वहाँ जाकर वे उसे अवश्य सुनते हैं॥3॥

*** तहाँ रहे सनकादि भवानी। जहँ घटसंभव मुनिबर ग्यानी॥ राम कथा मुनिबर बहु बरनी। ग्यान जोनि पावक जिमि अरनी॥4॥

भावार्थ:-

(शिवजी कहते हैं-) हे भवानी! सनकादि मुनि वहाँ गए थे (वहीं से चले आ रहे थे) जहाँ ज्ञानी मुनिश्रेष्ठ श्री अगस्त्यजी रहते थे। श्रेष्ठ मुनि ने श्री रामजी की बहुत सी कथाएँ वर्णन की थीं, जो ज्ञान उत्पन्न करने में उसी प्रकार समर्थ हैं, जैसे अरणि लकड़ी से अग्नि उत्पन्न होती है॥4॥

दोहा :

*** देखि राम मुनि आवत हरषि दंडवत कीन्ह। स्वागत पूँछि पीत पट प्रभु बैठन कहँ दीन्ह॥32॥

भावार्थ:-

सनकादि मुनियों को आते देखकर श्री रामचंद्रजी ने हर्षित होकर दंडवत् किया और स्वागत (कुशल) पूछकर प्रभु ने (उनके) बैठने के लिए अपना पीताम्बर बिछा दिया॥32॥

चौपाई :

*** कीन्ह दंडवत तीनिउँ भाई। सहित पवनसुत सुख अधिकाई॥ मुनि रघुपति छबि अतुल बिलोकी। भए मगन मन सके न रोकी॥1॥

भावार्थ:-

फिर हनुमान्‌जी सहित तीनों भाइयों ने दंडवत् की, सबको बड़ा सुख हुआ। मुनि श्री रघुनाथजी की अतुलनीय छबि देखकर उसी में मग्न हो गए। वे मन को रोक न सके॥1॥

*** स्यामल गात सरोरुह लोचन। सुंदरता मंदिर भव मोचन॥ एकटक रहे निमेष न लावहिं। प्रभु कर जोरें सीस नवावहिं॥2॥

भावार्थ:-

वे जन्म-मृत्यु (के चक्र) से छुड़ाने वाले, श्याम शरीर, कमलनयन, सुंदरता के धाम श्री रामजी को टकटकी लगाए देखते ही रह गए, पलक नहीं मारते और प्रभु हाथ जोड़े सिर नवा रहे हैं॥2॥

*** तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा। स्रवत नयन जल पुलक सरीरा॥ कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे। परम मनोहर बचन उचारे॥3॥

भावार्थ:-

उनकी (प्रेम विह्वल) दशा देखकर (उन्हीं की भाँति) श्री रघुनाथजी के नेत्रों से भी (प्रेमाश्रुओं का) जल बहने लगा और शरीर पुलकित हो गया। दतनन्तर प्रभु ने हाथ पकड़कर श्रेष्ठ मुनियों को बैठाया और परम मनोहर वचन कहे-॥3॥

*** आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा। तुम्हरें दरस जाहिं अघ खीसा॥ बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा॥4॥

भावार्थ:-

हे मुनीश्वरो! सुनिए, आज मैं धन्य हूँ। आपके दर्शनों ही से (सारे) पाप नष्ट हो जाते हैं। बड़े ही भाग्य से सत्संग की प्राप्ति होती है, जिससे बिन ही परिश्रम जन्म-मृत्यु का चक्र नष्ट हो जाता है॥4॥

दोहा :

*** संत संग अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ। कहहिं संत कबि कोबिद श्रुति पुरान सदग्रंथ॥33॥

भावार्थ:-

संत का संग मोक्ष (भव बंधन से छूटने) का और कामी का संग जन्म-मृत्यु के बंधन में पड़ने का मार्ग है। संत, कवि और पंडित तथा वेद, पुराण (आदि) सभी सद्ग्रंथ ऐसा कहते हैं॥33॥

चौपाई :

*** सुनि प्रभु बचन हरषि मुनि चारी। पुलकित तन अस्तुति अनुसारी॥ जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय॥1॥

भावार्थ:-

प्रभु के वचन सुनकर चारों मुनि हर्षित होकर, पुलकित शरीर से स्तुति करने लगे- हे भगवन्! आपकी जय हो। आप अंतरहित, विकाररहित, पापरहित, अनेक (सब रूपों में प्रकट), एक (अद्वितीय) और करुणामय हैं॥1॥

*** जय निर्गुन जय जय गुन सागर। सुख मंदिर सुंदर अति नागर॥ जय इंदिरा रमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि सोभाकर॥2॥

भावार्थ:-

हे निर्गुण! आपकी जय हो। हे गुण के समुद्र! आपकी जय हो, जय हो। आप सुख के धाम, (अत्यंत) सुंदर और अति चतुर हैं। हे लक्ष्मीपति! आपकी जय हो। हे पृथ्वी के धारण करने वाले! आपकी जय हो। आप उपमारहित, अजन्मे, अनादि और शोभा की खान हैं॥2॥

*** ग्यान निधान अमान मानप्रद। पावन सुजस पुरान बेद बद॥ तग्य कृतग्य अग्यता भंजन। नाम अनेक अनाम निरंजन॥3॥

भावार्थ:-

आप ज्ञान के भंडार, (स्वयं) मानरहित और (दूसरों को) मान देने वाले हैं। वेद और पुराण आपका पावन सुंदर यश गाते हैं। आप तत्त्व के जानने वाले, की हुई सेवा को मानने वाले और अज्ञान का नाश करने वाले हैं। हे निरंजन (मायारहित)! आपके अनेकों (अनंत) नाम हैं और कोई नाम नहीं है (अर्थात् आप सब नामों के परे हैं)॥3॥

*** सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय। बससि सदा हम कहुँ परिपालय द्वंद बिपति भव फंद बिभंजय। हृदि बसि राम काम मद गंजय॥4॥

भावार्थ:-

आप सर्वरूप हैं, सब में व्याप्त हैं और सबके हृदय रूपी घर में सदा निवास करते हैं, (अतः) आप हमारा परिपालन कीजिए। (राग-द्वेष, अनुकूलता-प्रतिकूलता, जन्म-मृत्यु आदि) द्वंद्व, विपत्ति और जन्म-मत्यु के जाल को काट दीजिए। हे रामजी! आप हमारे हृदय में बसकर काम और मद का नाश कर दीजिए॥4॥

दोहा :

*** परमानंद कृपायतन मन परिपूरन काम। प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम॥34॥

भावार्थ:-

आप परमानंद स्वरूप, कृपा के धाम और मन की कामनाओं को परिपूर्ण करने वाले हैं। हे श्री रामजी! हमको अपनी अविचल प्रेमाभक्ति दीजिए॥34॥

चौपाई :

*** देहु भगति रघुपति अति पावनि। त्रिबिधि ताप भव दाप नसावनि॥ प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु। होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु॥1॥

भावार्थ:-

हे रघुनाथजी! आप हमें अपनी अत्यंत पवित्र करने वाली और तीनों प्रकार के तापों और जन्म-मरण के क्लेशों का नाश करने वाली भक्ति दीजिए। हे शरणागतों की कामना पूर्ण करने के लिए कामधेनु और कल्पवृक्ष रूप प्रभो! प्रसन्न होकर हमें यही वर दीजिए॥1॥

*** भव बारिधि कुंभज रघुनायक। सेवत सुलभ सकल सुख दायक॥ मन संभव दारुन दुख दारय। दीनबंधु समता बिस्तारय॥2॥

भावार्थ:-

हे रघुनाथजी! आप जन्म-मृत्यु रूप समुद्र को सोखने के लिए अगस्त्य मुनि के समान हैं। आप सेवा करने में सुलभ हैं तथा सब सुखों के देने वाले हैं। हे दीनबंधो! मन से उत्पन्न दारुण दुःखों का नाश कीजिए और (हम में) समदृष्टि का विस्तार कीजिए॥2॥

*** आस त्रास इरिषाद निवारक। बिनय बिबेक बिरति बिस्तारक॥ भूप मौलि मनि मंडन धरनी। देहि भगति संसृति सरि तरनी॥3॥

भावार्थ:-

आप (विषयों की) आशा, भय और ईर्षा आदि के निवारण करने वाले हैं तथा विनय, विवेक और वैराग्य के विस्तार करने वाले हैं। हे राजाओं के शिरोमणि एवं पृथ्वी के भूषण श्री रामजी! संसृति (जन्म-मृत्यु के प्रवाह) रूपी नदी के लिए नौका रूप अपनी भक्ति प्रदान कीजिए॥3॥

*** मुनि मन मानस हंस निरंतर। चरन कमल बंदित अज संकर॥ रघुकुल केतु सेतु श्रुति रच्छक। काल करम सुभाउ गुन भच्छक॥4॥

भावार्थ:-

हे मुनियों के मन रूपी मानसरोवर में निरंतर निवास करने वाले हंस! आपके चरणकमल ब्रह्माजी और शिवजी के द्वारा वंदित हैं। आप रघुकुल के केतु, वेदमर्यादा के रक्षक और काल, कर्म, स्वभाव तथा गुण (रूप बंधनों) के भक्षक (नाशक) हैं॥4॥

*** तारन तरन हरन सब दूषन। तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन॥5॥

भावार्थ:-

आप तरन-तारन (स्वयं तरे हुए और दूसरों को तारने वाले) तथा सब दोषों को हरने वाले हैं। तीनों लोकों के विभूषण आप ही तुलसीदास के स्वामी हैं॥5॥

दोहा :

*** बार-बार अस्तुति करि प्रेम सहित सिरु नाइ। ब्रह्म भवन सनकादि गे अति अभीष्ट बर पाइ॥35॥

भावार्थ:-

प्रेम सहित बार-बार स्तुति करके और सिर नवाकर तथा अपना अत्यंत मनचाहा वर पाकर सनकादि मुनि ब्रह्मलोक को गए॥35॥

चौपाई :

*** सनकादिक बिधि लोक सिधाए। भ्रातन्ह राम चरन सिर नाए॥ पूछत प्रभुहि सकल सकुचाहीं। चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं॥1॥

भावार्थ:-

सनकादि मुनि ब्रह्मलोक को चले गए। तब भाइयों ने श्री रामजी के चरणों में सिर नवाया। सब भाई प्रभु से पूछते सकुचाते हैं। (इसलिए) सब हनुमान्‌जी की ओर देख रहे हैं॥1॥

हनुमान्‌जी के द्वारा भरतजी का प्रश्न और श्री रामजी का उपदेश

*** सुनी चहहिं प्रभु मुख कै बानी। जो सुनि होइ सकल भ्रम हानी॥ अंतरजामी प्रभु सभ जाना। बूझत कहहु काह हनुमाना॥2॥

भावार्थ:-

वे प्रभु के श्रीमुख की वाणी सुनना चाहते हैं जिसे सुनकर सारे भ्रमों का नाश हो जाता है। अंतरयामी प्रभु सब जान गए और पूछने लगे- कहो हनुमान्‌! क्या बात है?॥2॥

*** जोरि पानि कह तब हनुमंता। सुनहु दीनदयाल भगवंता॥ नाथ भरत कछु पूँछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं॥3॥

भावार्थ:-

तब हनुमान्‌जी हाथ जोड़कर बोले- हे दीनदयालु भगवान्‌! सुनिए। हे नाथ! भरतजी कुछ पूछना चाहते हैं, पर प्रश्न करते मन में सकुचा रहे हैं॥3॥

*** तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ। भरतहि मोहि कछु अंतर काऊ॥ सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना। सुनहु नाथ प्रनतारति हरना॥4॥

भावार्थ:-

(भगवान् ने कहा-) हनुमान्‌! तुम तो मेरा स्वभाव जानते ही हो। भरत के और मेरे बीच में कभी भी कोई अंतर (भेद) है? प्रभु के वचन सुनकर भरतजी ने उनके चरण पकड़ लिए (और कहा-) हे नाथ! हे शरणागत के दुःखों को हरने वाले! सुनिए॥4॥

दोहा :

*** नाथ न मोहि संदेह कछु सपनेहुँ सोक न मोह। केवल कृपा तुम्हारिहि कृपानंद संदोह॥36॥

भावार्थ:-

हे नाथ! न तो मुझे कुछ संदेह है और न स्वप्न में भी शोक और मोह है। हे कृपा और आनंद के समूह! यह केवल आपकी ही कृपा का फल है॥36॥

चौपाई :

*** करउँ कृपानिधि एक ढिठाई। मैं सेवक तुम्ह जन सुखदाई॥ संतन्ह कै महिमा रघुराई। बहु बिधि बेद पुरानन्ह गाई॥1॥

भावार्थ:-

तथापि हे कृपानिधान! मैं आप से एक धृष्टता करता हूँ। मैं सेवक हूँ और आप सेवक को सुख

देने वाले हैं (इससे मेरी दृष्टता को क्षमा कीजिए और मेरे प्रश्न का उत्तर देकर सुख दीजिए)। हे रघुनाथजी वेद-पुराणों ने संतों की महिमा बहुत प्रकार से गाई है॥1॥

***श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ाई। तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिकाई॥ सुना चहउँ प्रभु तिन्ह कर लच्छन। कृपासिंधु गुन ग्यान बिचच्छन॥2॥

भावार्थ:-

आपने भी अपने श्रीमुख से उनकी बड़ाई की है और उन पर प्रभु (आप) का प्रेम भी बहुत है। हे प्रभो! मैं उनके लक्षण सुनना चाहता हूँ। आप कृपा के समुद्र हैं और गुण तथा ज्ञान में अत्यंत निपुण हैं॥2॥

***संत असंत भेद बिलगाई। प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई॥ संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिख्याता॥3॥

भावार्थ:-

हे शरणागत का पालन करने वाले! संत और असंत के भेद अलग-अलग करके मुझको समझाकर कहिए। (श्री रामजी ने कहा-) हे भाई! संतों के लक्षण (गुण) असंख्य हैं, जो वेद और पुराणों में प्रसिद्ध हैं॥3॥

*** संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी॥ काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई॥4॥

भावार्थ:-

संत और असंतों की करनी ऐसी है जैसे कुल्हाड़ी और चंदन का आचरण होता है। हे भाई! सुनो, कुल्हाड़ी चंदन को काटती है (क्योंकि उसका स्वभाव या काम ही वृक्षों को काटना है), किंतु चंदन अपने स्वभाववश अपना गुण देकर उसे (काटने वाली कुल्हाड़ी को) सुगंध से सुवासित कर देता है॥4॥

दोहा :

*** ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड। अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड॥37॥

भावार्थ:-

इसी गुण के कारण चंदन देवताओं के सिरों पर चढ़ता है और जगत् का प्रिय हो रहा है और कुल्हाड़ी के मुख को यह दंड मिलता है कि उसको आग में जलाकर फिर घन से पीटते हैं॥37॥

चौपाई :

*** बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर॥ सम अभूतरिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी॥1॥

भावार्थ:-

संत विषयों में लंपट (लिप्त) नहीं होते, शील और सद्गुणों की खान होते हैं, उन्हें पराया दुःख

देखकर दुःख और सुख देखकर सुख होता है। वे (सबमें, सर्वत्र, सब समय) समता रखते हैं, उनके मन कोई उनका शत्रु नहीं है। वे मद से रहित और वैराग्यवान् होते हैं तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किए हुए रहते हैं॥1॥

*** कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया॥ सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी॥2॥

भावार्थ:-

उनका चित्त बड़ा कोमल होता है। वे दीनों पर दया करते हैं तथा मन, वचन और कर्म से मेरी निष्कपट (विशुद्ध) भक्ति करते हैं। सबको सम्मान देते हैं, पर स्वयं मानरहित होते हैं। हे भरत! वे प्राणी (संतजन) मेरे प्राणों के समान हैं॥2॥

*** बिगत काम मम नाम परायन। सांति बिरति बिनती मुदितायन॥ सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री॥3॥

भावार्थ:-

उनको कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते है। शांति, वैराग्य, विनय और प्रसन्नता के घर होते हैं। उनमें शीलता, सरलता, सबके प्रति मित्र भाव और ब्राह्मण के चरणों में प्रीति होती है, जो धर्मों को उत्पन्न करने वाली है॥3॥

*** ए सब लच्छन बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर॥ सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं॥4॥

भावार्थ:-

हे तात! ये सब लक्षण जिसके हृदय में बसते हों, उसको सदा सच्चा संत जानना। जो शम (मन के निग्रह), दम (इंद्रियों के निग्रह), नियम और नीति से कभी विचलित नहीं होते और मुख से कभी कठोर वचन नहीं बोलते,॥4॥

दोहा :

***निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज। ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज॥38॥

भावार्थ:-

जिन्हें निंदा और स्तुति (बड़ाई) दोनों समान हैं और मेरे चरणकमलों में जिनकी ममता है, वे गुणों के धाम और सुख की राशि संतजन मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं॥38॥

चौपाई :

*** सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ। भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ॥ तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई॥1॥

भावार्थ:-

अब असंतों दुष्टों का स्वभाव सुनो, कभी भूलकर भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिए। उनका

संग सदा दुःख देने वाला होता है। जैसे हरहाई (बुरी जाति की) गाय कपिला (सीधी और दुधार) गाय को अपने संग से नष्ट कर डालती है॥1॥

***खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी॥ जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई। हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई॥2॥

भावार्थ:-

बदुष्टों के हृदय में बहुत अधिक संताप रहता है। वे पराई संपत्ति (सुख) देखकर सदा जलते रहते हैं। वे जहाँ कहीं दूसरे की निंदा सुन पाते हैं, वहाँ ऐसे हर्षित होते हैं मानो रास्ते में पड़ी निधि (खजाना) पा ली हो॥2॥

*** काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन॥ बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों॥3॥

भावार्थ:-

वे काम, क्रोध, मद और लोभ के परायण तथा निर्दयी, कपटी, कुटिल और पापों के घर होते हैं। वे बिना ही कारण सब किसी से वैर किया करते हैं। जो भलाई करता है उसके साथ बुराई भी करते हैं॥3॥

***झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना। बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा॥4॥

भावार्थ:-

उनका झूठा ही लेना और झूठा ही देना होता है। झूठा ही भोजन होता है और झूठा ही चबेना होता है। (अर्थात् वे लेने-देने के व्यवहार में झूठ का आश्रय लेकर दूसरों का हक मार लेते हैं अथवा झूठी डींग हाँका करते हैं कि हमने लाखों रुपए ले लिए, करोड़ों का दान कर दिया। इसी प्रकार खाते हैं चने की रोटी और कहते हैं कि आज खूब माल खाकर आए। अथवा चबेना चबाकर रह जाते हैं और कहते हैं हमें बढ़िया भोजन से वैराग्य है, इत्यादि। मतलब यह कि वे सभी बातों में झूठ ही बोला करते हैं।) जैसे मोर साँपों को भी खा जाता है। वैसे ही वे भी ऊपर से मीठे वचन बोलते हैं। (परंतु हृदय के बड़े ही निर्दयी होते हैं)॥4॥

दोहा :

*** पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद। ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद॥39॥

भावार्थ:-

वे दूसरों से द्रोह करते हैं और पराई स्त्री, पराए धन तथा पराई निंदा में आसक्त रहते हैं। वे पामर और पापमय मनुष्य नर शरीर धारण किए हुए राक्षस ही हैं॥39॥

चौपाई :

***लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न॥ काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई॥1॥

भावार्थ:-

लोभ ही उनका ओढ़ना और लोभ ही बिछौना होता है (अर्थात् लोभ ही से वे सदा घिरे हुए रहते हैं)। वे पशुओं के समान आहार और मैथुन के ही परायण होते हैं, उन्हें यमपुर का भय नहीं लगता। यदि किसी की बड़ाई सुन पाते हैं, तो वे ऐसी (दुःखभरी) साँस लेते हैं मानों उन्हें जूड़ी आ गई हो॥1॥

*** जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती॥ स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी॥2॥

भावार्थ:-

और जब किसी की विपत्ति देखते हैं, तब ऐसे सुखी होते हैं मानो जगत्भर के राजा हो गए हों। वे स्वार्थपरायण, परिवार वालों के विरोधी, काम और लोभ के कारण लंपट और अत्यंत क्रोधी होते हैं॥2॥

*** मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं॥ करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा॥3॥

भावार्थ:-

वे माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण किसी को नहीं मानते। आप तो नष्ट हुए ही रहते हैं (साथ ही अपने संग से) दूसरों को भी नष्ट करते हैं। मोहवश दूसरों से द्रोह करते हैं। उन्हें न संतों का संग अच्छा लगता है, न भगवान् की कथा ही सुहाती है॥3॥

*** अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥ बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा॥4॥

भावार्थ:-

वे अवगुणों के समुद्र, मन्दबुद्धि, कामी (रागयुक्त), वेदों के निंदक और जबर्दस्ती पराए धन के स्वामी (लूटने वाले) होते हैं। वे दूसरों से द्रोह तो करते ही हैं, परंतु ब्राह्मण द्रोह विशेषता से करते हैं। उनके हृदय में दम्भ और कपट भरा रहता है, परंतु वे ऊपर से सुंदर वेष धारण किए रहते हैं॥4॥

दोहा :

*** ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं। द्वापर कछुक बृंद बहु होइहहिं कलिजुग माहिं॥40॥

भावार्थ:-

ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य सत्ययुग और त्रेता में नहीं होते। द्वापर में थोड़े से होंगे और कलियुग में तो इनके झुंड के झुंड होंगे॥40॥

चौपाई :

*** पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥ निर्नय सकल पुरान बेद कर।

कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर॥1॥

भावार्थ:-

हे भाई! दूसरों की भलाई के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को दुःख पहुँचाने के समान कोई नीचता (पाप) नहीं है। हे तात! समस्त पुराणों और वेदों का यह निर्णय (निश्चित सिद्धांत) मैंने तुमसे कहा है, इस बात को पण्डित लोग जानते हैं॥1॥

*** नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा॥ लकरहिं मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत परलोक नसाना॥2॥

भावार्थ:-

मनुष्य का शरीर धारण करके जो लोग दूसरों को दुःख पहुँचाते हैं, उनको जन्म-मृत्यु के महान् संकट सहने पड़ते हैं। मनुष्य मोहवश स्वार्थपरायण होकर अनेकों पाप करते हैं, इसी से उनका परलोक नष्ट हुआ रहता है॥2॥

*** कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता। सुभ अरु असुभ कर्म फलदाता॥ अस बिचारि जे परम सयाने। भजहिं मोहि संसृत दुख जाने॥3॥

भावार्थ:-

हे भाई! मैं उनके लिए कालरूप (भयंकर) हूँ और उनके अच्छे और बुरे कर्मों का (यथायोग्य) फल देने वाला हूँ। ऐसा विचार कर जो लोग परम चतुर हैं वे संसार (के प्रवाह) को दुःख रूप जानकर मुझे ही भजते हैं॥3॥

***त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक। भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक॥ संत असंतन्ह के गुन भाषे। ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे॥4॥

भावार्थ:-

इसी से वे शुभ और अशुभ फल देने वाले कर्मों को त्यागकर देवता, मनुष्य और मुनियों के नायक मुझको भजते हैं। (इस प्रकार) मैंने संतों और असंतों के गुण कहे। जिन लोगों ने इन गुणों को समझ रखा है, वे जन्म-मरण के चक्कर में नहीं पड़ते॥4॥

दोहा :

*** सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक। गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक॥41॥

भावार्थ:-

हे तात! सुनो, माया से रचे हुए ही अनेक (सब) गुण और दोष हैं (इनकी कोई वास्तविक सत्ता नहीं है)। गुण (विवेक) इसी में है कि दोनों ही न देखे जाएँ, इन्हें देखना ही अविवेक है॥41॥

चौपाई :

*** श्रीमुख बचन सुनत सब भाई। हरषे प्रेम न हृदयँ समाई॥ करहिं बिनय अति बारहिं बारा। हनूमान हियँ हरष अपारा॥1॥

भावार्थ:-

भगवान के श्रीमुख से ये वचन सुनकर सब भाई हर्षित हो गए। प्रेम उनके हृदयों में समाता नहीं। वे बार-बार बड़ी विनती करते हैं। विशेषकर हनुमान्‌जी के हृदय में अपार हर्ष है॥1॥

***पुनि रघुपति निज मंदिर गए। एहि बिधि चरित करत नित नए॥ बार बार नारद मुनि आवहिं। चरित पुनीत राम के गावहिं॥2॥ `

भावार्थ:-

तदनन्तर श्री रामचंद्रजी अपने महल को गए। इस प्रकार वे नित्य नई लीला करते हैं। नारद मुनि अयोध्या में बार-बार आते हैं और आकर श्री रामजी के पवित्र चरित्र गाते हैं॥2॥

*** नित नव चरित देखि मुनि जाहीं। ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं॥ सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं। पुनि पुनि तात करहु गुन गानहिं॥3॥

भावार्थ:-

मुनि यहाँ से नित्य नए-नए चरित्र देखकर जाते हैं और ब्रह्मलोक में जाकर सब कथा कहते हैं। ब्रह्माजी सुनकर अत्यंत सुख मानते हैं (और कहते हैं-) हे तात! बार-बार श्री रामजी के गुणों का गान करो॥3॥

***सनकादिक नारदहि सराहहिं। जद्यपि ब्रह्म निरत मुनि आहहिं॥ सुनि गुन गान समाधि बिसारी। सादर सुनहिं परम अधिकारी॥4॥

भावार्थ:-

सनकादि मुनि नारदजी की सराहना करते हैं। यद्यपि वे (सनकादि) मुनि ब्रह्मनिष्ठ हैं, परंतु श्री रामजी का गुणगान सुनकर वे भी अपनी ब्रह्मसमाधि को भूल जाते हैं और आदरपूर्वक उसे सुनते हैं। वे (रामकथा सुनने के) श्रेष्ठ अधिकारी हैं॥4॥

दोहा :

*** जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान। जे हरि कथाँ न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान॥42॥

भावार्थ:-

सनकादि मुनि जैसे जीवन्मुक्त और ब्रह्मनिष्ठ पुरुष भी ध्यान (ब्रह्म समाधि) छोड़कर श्री रामजी के चरित्र सुनते हैं। यह जानकर भी जो श्री हरि की कथा से प्रेम नहीं करते, उनके हृदय (सचमुच ही) पत्थर (के समान) हैं॥42॥ ***अगला पेज...***